लॉटरी

प्रेमचंद

लॉटरी

प्रेमचंद

जल्दी से मालदार हो जाने की हवस किसे नहीं होती ? उन दिनों जब लॉटरी के टिकट आये, तो मेरे दोस्त, विक्रम के पिता, चचा, अम्मा, और भाई,सभी ने एक-एक टिकट खरीद लिया। कौन जाने, किसकी तकदीर जोर करे ? किसी के नाम आये, रुपया रहेगा तो घर में ही।

मगर विक्रम को सब्र न हुआ। औरों के नाम रुपये आयेंगे, फिर उसे कौन पूछता है ? बहुत होगा, दस-पाँच हजार उसे दे देंगे। इतने रुपयों में उसका क्या होगा ? उसकी जिन्दगी में बड़े-बड़े मंसूबे थे। पहले तो उसे सम्पूर्ण जगत की यात्रा करनी थी, एक-एक कोने की। पीरू और ब्राजील और टिम्बकटू और होनोलूलू, ये सब उसके प्रोग्राम में थे। वह आँधी की तरह महीने-दो-महीने उड़कर लौट आनेवालों में न था। वह एक-एक स्थान में कई-कई दिन ठहरकर वहाँ के रहन-सहन, रीति-रिवाज आदि का अध्ययन करना और संसार-यात्रा का एक वृहद् ग्रंथ लिखना चाहता था। फिर उसे एक बहुत बड़ा पुस्तकालय बनवाना था, जिसमें दुनिया-भर की उत्तम रचनाएँ जमा की जायँ। पुस्तकालय के लिए वह दो लाख तक खर्च करने को तैयार था, बँगला, कार और फर्नीचर तो मामूली बातें थीं। पिता या चचा के नाम रुपये आये, तो पाँच हजार से ज्यादा का डौल नहीं, अम्माँ के नाम आये, तो बीस हजार मिल जायँगे; लेकिन भाई साहब के नाम आ गये, तो उसके हाथ धोला भी न लगेगा। वह आत्माभिमानी था। घर वालों से खैरात या पुरस्कार के रूप में कुछ लेने की बात उसे अपमान-सी लगती थी। कहा, करता था भाई,किसी के सामने हाथ फैलाने से तो किसी गड्ढे में डूब मरना अच्छा है। जब आदमी अपने लिए संसार में कोई स्थान न निकाल सके, तो यहाँ से प्रस्थान कर जाय ?

वह बहुत बेकरार था। घर में लॉटरी-टिकट के लिए उसे कौन रुपए देगा और वह माँगेगा भी तो कैसे ? उसने बहुत सोच-विचार कर कहा, क्यों न हम-तुम साझे में एक टिकट ले लें ?

तजवीज मुझे भी पसंद आयी। मैं उन दिनों स्कूल-मास्टर था। बीस रुपये मिलते थे। उसमें बड़ी मुश्किल से गुजर होती थी। दस रुपये का टिकट खरीदना मेरे लिए सुफेद हाथी खरीदना था। हाँ, एक महीना दूध, घी, जलपान और ऊपर के सारे खर्च तोड़कर पाँच रुपये की गुंजाइश निकल सकती थी। फिर भी जी डरता था। कहीं से कोई बलाई रकम मिल जाय, तो कुछ हिम्मत बढ़े।

विक्रम ने कहा, 'क़हो तो अपनी अँगूठी बेच डालूँ ? कह दूंगा, उँगली से फिसल पड़ी।'

अँगूठी दस रुपये से कम की न थी। उसमें पूरा टिकट आ सकता था; अगर कुछ खर्च किये बिना ही टिकट में आधा-साझा हुआ जाता है, तो क्या बुरा है ?

सहसा विक्रम फिर बोला, लेकिन भई, तुम्हें नकद देने पड़ेंगे। मैं पाँच रुपये नकद लिये बगैर साझा न करूँगा।

अब मुझे औचित्य का ध्यान आ गया। बोला, नहीं दोस्त, यह बुरी बात है, चोरी खुल जायेगी, तो शर्मिन्दा होना पड़ेगा और तुम्हारे साथ मुझ पर भी डाँट पड़ेगी।

आखिर यह तय हुआ कि पुरानी किताबें किसी सेकेन्ड हैंड किताबों की दूकान पर बेच डाली जायँ और उस रुपये से टिकट लिया जाय। किताबों से ज्यादा बेजरूरत हमारे पास और कोई चीज न थी। हम दोनों साथ ही मैट्रिक पास हुए थे और यह देखकर कि जिन्होंने डिग्रियाँ लीं, अपनी आँखें फोड़ीं और घर के रुपये बरबाद किये, वह भी जूतियाँ चटका रहे थे, हमने वहीं हाल्ट कर दिया। मैं स्कूल-मास्टर हो गया और विक्रम मटरगश्ती करने लगा ? हमारी पुरानी पुस्तकें अब दीमकों के सिवा हमारे किसी काम की न थीं। हमसे जितना चाटते बना चाटा; उनका सत्त निकाल लिया। अब चूहे चाटें या दीमक, हमें परवाह न थी। आज हम दोनों ने उन्हें कूड़ेखाने से निकाला और झाड़-पोंछ कर एक बड़ा-सा गट्ठर बाँध। मास्टर था, किसी बुकसेलर की दूकान पर किताब बेचते हुए झेंपता था।

मुझे सभी पहचानते थे;इसलिए यह खिदमत विक्रम के सुपुर्द हुई और वह आधा घंटे में दस रुपये का एक नोट लिये उछलता-कूदता आ पहुँचा। मैंने उसे इतना प्रसन्न कभी न देखा था। किताबें चालीस रुपये से कम की न थीं; पर यह दस रुपये उस वक्त हमें जैसे पड़े हुए मिले। अब टिकट में आधा साझा होगा। दस लाख की रकम मिलेगी। पाँच लाख मेरे हिस्से में आयेंगे, पाँच विक्रम के। हम अपने इसी में मगन थे।

मैंने संतोष का भाव दिखाकर कहा, 'पाँच लाख भी कुछ कम नहीं होते जी !'

विक्रम इतना संतोषी न था। बोला, 'पाँच लाख क्या, हमारे लिए तो इस वक्त पाँच सौ भी बहुत है भाई, मगर जिन्दगी का प्रोग्राम तो बदलना पड़ गया। मेरी यात्रावाली स्कीम तो टल नहीं सकती। हाँ, पुस्तकालय गायब हो गया।

मैंने आपत्ति की आखिर यात्रा में तुम दो लाख से ज्यादा तो न खर्च करोगे ?'

'जी नहीं, उसका बजट है साढ़े तीन लाख का। सात वर्ष का प्रोग्रामहै। पचास हजार रुपये साल ही तो हुए ?'

'चार हजार महीना कहो। मैं समझता हूँ, दो हजार में तुम बड़े आराम से रह सकते हो।'

विक्रम ने गर्म होकर कहा, 'मैं शान से रहना चाहता हूँ; भिखारियों की तरह नहीं।'

'दो हजार में भी तुम शान से रह सकते हो।'

'जब तक आप अपने हिस्से में से दो लाख मुझे न दे देंगे, पुस्तकालय न बन सकेगा।'

'कोई जरूरी नहीं कि तुम्हारा पुस्तकालय शहर में बेजोड़ हो ?'

'मैं तो बेजोड़ ही बनवाऊँगा।'